International Journal of Applied Research 2021; 7(2): 151-154

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 8.4
IJAR 2021; 7(2): 151-154
www.allresearchjournal.com
Received: 16-12-2020
Accepted: 11-01-2021

प्रियांशी
संस्कृत विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत

Corresponding Author:
प्रियांशी
संस्कृत विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत

ब्राह्मी लिपि एवं उससे प्रभावित लिपियां

प्रियांशी

सार
संसार के लोग अपने देश, काल और परिस्थितियों के अनुसार अपने दैनिक व्यवहार एवं प्राप्त ज्ञान को लिखित रूप में सुरक्षित करने के लिए विभिन्न लिपियों का निर्माण करते हैं। भारत में प्राप्त अनेक प्राचीन मुद्राएं पढी न जाने से वर्त्तमान ज्ञात प्राचीनतम लिपि ब्राह्मी है। लगभग संपूर्ण भारत में प्रचलित ब्राह्मी लिपि में देश, काल, स्थान और विभिन्न लेखन पद्धतियों के कारण अनेक परिवर्तन हुए। जिससे कालान्तर में अनेक लिपियां विकसित हुई। भारत के निकटवर्ती देशों पर भी इसका प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। वर्त्तमान काल में प्रचलित भारतीय लिपियों का मूल ब्राह्मी लिपि है। प्रस्तुत शोधपत्र में ब्राह्मी लिपि के स्वरूप के साथ - साथ उससे विकसित लिपियों का भी चिंतन किया गया है।

शब्द संकेत: ब्राह्मी, लिपि, अशोक, शारदा, ग्रन्थ।

प्रस्तावना
मानव सभ्यता के विकास में भाषा का महत्त्वपूर्ण योगदान है। भाषा अतीत का ज्ञान प्राप्त करने व वर्त्तमान विचारों के प्रस्तुतीकरण में आवश्यक है। भाषा के अभाव में मानव समाज व संस्कृति का यथोचित ज्ञान प्राप्त करना प्रायः असम्भव प्रतीत होता है। इसलिए आचार्य दण्डी का यह कथन सम्यक् प्रतीत होता है कि यदि शब्दरूपी ज्योति न होती तो यह समस्त संसार अंधकार में विलीन हो जाता।[1] प्रमुखतया भाषा दो रूपों में उपलब्ध होती है- मनुष्यों की वाणी के रूप में तथा लिखित रूप में। भाषा का लिखित रूप उसे कालान्तर में भी जीवन्त बनाए रखता है।

भारत में लेखन कला व ब्राह्मी लिपि
लेखन के लिए प्राचीन काल से ही विभिन्न लिपियों का प्रयोग होता रहा है। सिन्धु घाटी सभ्यता के अन्तर्गत हडप्पा, मोहनजोदडो, कालीबंगा, लोथल आदि क्षेत्रों से प्राप्त प्राचीन मुद्राओं, भाण्डों पर अंकित लिपि न पढे जाने से भारतवर्ष में वर्त्तमान ज्ञात

प्राचीनतम लिपि ब्राह्मी है। यद्यपि प्राचीन भारत में लेखन कला के उन्नत प्रयोग के प्रमाण मिलते है। महाभारत में 'ग्रन्थ' शब्द ताडपत्र अथवा भूर्जपत्र पर लिखित पुस्तक के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। पाणिनीय व्याकरण में ग्रन्थ[2], लिपिकर[3], यवनानी लिपि[4] आदि लेखन संबंधी शब्दों का निर्देश दिया गया है। बौद्ध ग्रन्थ ललितविस्तर में 64 लिपियों के नामों का उल्लेख मिलता है।[5] बौद्ध जातकों तथा जैन सूत्र ग्रन्थ पण्णवणासुत्त एवं समवायाङ्गसुत्त में लेखन के संबंध में प्रचुर उल्लेख मिलते हैं। तथापि मध्यकाल में लोगों का प्राचीन लिपि विषयक ज्ञान उपेक्षित रहा। 1356 ई. में फिरोजशाह तुगलक दो उत्कीर्ण शिलालेखों को टोपरा व मेरठ से दिल्ली लाया[6] व अनेक विद्वानों से उन शिलालेखों को पढवाने का प्रयास किया परंतु तत्कालीन विद्वानों को प्राचीन लिपि विषयक ज्ञान न होने से सब कुछ अंधकार में ही रहा। ब्रिटिश राज के दौरान अनेक विद्वानों के प्रयास से प्राचीन लिपियों को पढने में सफलता मिली। विभिन्न शिलालेखों, दानपत्रों, मुद्राओं आदि के अध्ययन व संरक्षण के लिए सर विलियम्स जोन्स ने 1784 ई. में 'एशियाटिक सोसायटी आफ बंगाल' की स्थापना की। इसी परम्परा में सर जेम्स प्रिंसेप ने 1837 ई. में सांची के स्तूप से ब्राह्मी लिपि के 'दानं' शब्द को पढने में सफलता प्राप्त की ।[7]

ब्राह्मी लिपि का स्वरूप एवं विशेषताएं

अशोककालीन लेखों में प्राप्त ब्राह्मी लिपि के स्वरूप को उसका प्रारम्भिक रूप माना जा सकता है। अशोक के लेखों में ब्राह्मी वर्णों को ज्यामितीय आकृतियों - सरल रेखा, वक्र रेखा, त्रिभुज, वृत्तादि की सहायता से रूप दिया गया है। वर्ण कोणात्मक है। शिरोरेखा का अभाव है।[8]

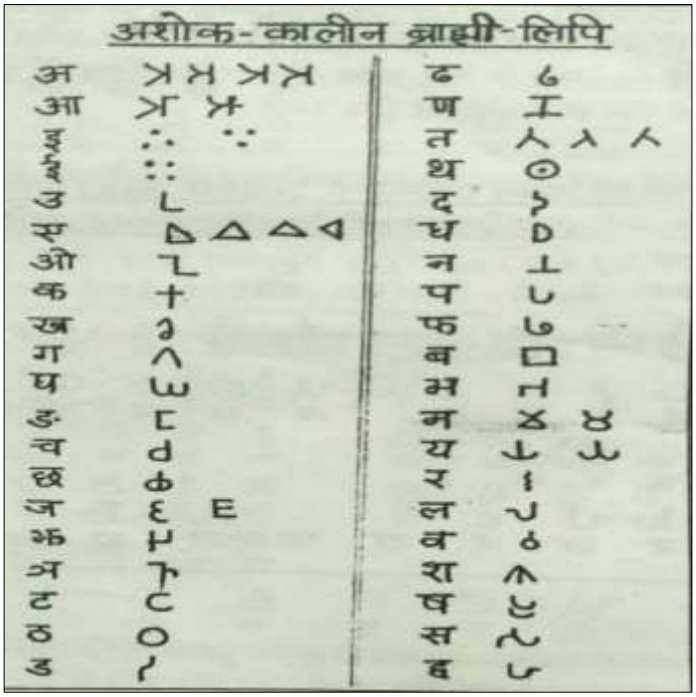

प्रायः सभी विद्वान ब्राह्मी लिपि को ही भारत की बहुतायत प्राप्त लिपियों का मूल मानते हैं। समय व स्थान के प्रभाव से ब्राह्मी लिपि भी अछूती नहीं रही। लेखन के क्षेत्र में व्यक्तिगत वर्ण संरचना के ढंग, सजावट की प्रवृत्ति, लेखन के लिए विभिन्न कठोर व कोमल धरातलों के प्रयोग व लेखन में प्रयुक्त विभिन्न साधनों यथा छैनी, तूलिका, शलाका आदि के प्रयोग से वर्णों की आकृति में विभिन्न परिवर्तन हुए। तूलिका से स्याही को लेकर जहां से वर्ण लेखन आरम्भ होता था वहां से

वर्ण थोडा मोटा हो गया, जिससे कालान्तर में शिरोरेखा का जन्म हुआ। भूर्जपत्र, ताडपत्र इत्यादि कोमल धरातल पर शलाका से लिखने पर घसीट प्रवृत्ति से वर्णों में गोलाई आ गई। कुषाण काल व गुप्तकाल के विभिन्न अभिलेखों में इस प्रकार के परिवर्तन दृष्टिगोचर होते है। लेखन पद्धति की विभिन्न दशाओं के कारण ब्राह्मी लिपि के दो प्रमुख रूप विकसित हुए, जिन्हें उत्तर भारतीय शैली व दक्षिण भारतीय शैली के नाम से जाना गया।

एक लिपि के रूप में ब्राह्मी उन्नत स्थिति में विराजमान है। वर्त्तमान के वैज्ञानिक युग में भी आधुनिक लिपियों में ध्वनि और उसके सूचक चिह्न में असाम्यता तथा वर्णों में शास्त्रीय क्रम का अभाव पाया जाता है, वहीं हजारों वर्षों पूर्व प्रचलित ब्राह्मी लिपि इस प्रकार के दोषों से सर्वथा मुक्त है। लिपिशास्त्र की उत्कृष्ट विशेषताओं की भांति इसमें प्रत्येक ध्वनि के लिए अलग-अलग चिह्नों का प्रयोग किया गया है, जैसा बोला जाता है, वैसा ही लिखा जाता है तथा वर्णक्रम भी वैज्ञानिक रीति से व्यवस्थापित किया गया है। वर्णक्रम के अनुसार अंकक्रम भी वैज्ञानिक रीति से व्यवस्थित किया गया है। ब्राह्मी से विकसित अधिकांश लिपियों में आज भी यें विशेषताएं पायी जाती हैं।

उत्तर भारतीय शैली

वर्णों को कठोर धरातल पर छैनी आदि से उत्कीर्ण करने, सजावट की प्रवृत्ति ने वर्णों में कोणीय रूप तथा लेखन में अनवरतता एवं तूलिका के ऊपर उठने में हुई क्षणिक देरी के कारण खडी रेखा के अंत में झुकाव ने उत्तर भारतीय रूप को विकसित किया। ब्राह्मी लिपि में कोणीय स्वरूप व सजावट प्रवृत्ति से उत्पन्न कुटिल लिपि से मध्य भारत में नागरी लिपि व उत्तर-पश्चिम भारत में शारदा लिपि का विकास हुआ। उत्तर भारत में प्रचलित वर्त्तमान लिपियां शारदा लिपि से ही प्रभावित है। उत्तर भारत के अन्तर्गत शारदा लिपि से ही टाकरी, वर्त्तमान कश्मीरी एवं पंजाबी लिपियों का विकास हुआ। पहाडी क्षेत्रों में चम्बा, जौनसारी, कुल्लु, डोगरी, लण्डा आदि लिपियां शारदा के विभिन्न स्थानीय परिवर्तन से विकसित हुई।

कुटिल लिपि विकसित नागरी लिपि से ही वर्त्तमान देवनागरी लिपि विकसित हुई व दसवीं शताब्दी के पश्चात् बंगाल में नागरी के रूप में परिवर्तन के फलस्वरूप बंगला लिपि का विकास हुआ। कालान्तर में इसी बंगला लिपि से असमी, उडिया, नेवारी व प्राचीन मणिपुरी लिपि विकसित हुई। बिहार में मैथिली लिपि पर भी नागरी लिपि का प्रभाव दिखाई देता है।

दक्षिण भारतीय शैली

दक्षिण भारत में ब्राह्मी लिपि रूप को कोमल धरातल पर शलाका से लिखने पर घसीट प्रवृत्ति एवं वर्णों में गोलाई से तेलुगु व कन्नड लिपि विकसित हुई। इसी प्रकार तमिल लिपि में संस्कृत लेखन के आवश्यक वर्णों के अभाव के कारण एक अन्य ग्रन्थ लिपि प्रचलित हुई। यद्यपि ग्रंथ लिपि का प्रारम्भिक रूप तेलुगु व कन्नड लिपि से निकट था परन्तु बाद में यह परिवर्तित होता गया। ग्रंथ लिपि का प्रभाव मलयालम लिपि पर भी दृष्टिगोचर होता है। नागरी, तेलुगु-कन्नड व ग्रन्थ लिपि - इन तीनों के मिश्रित रूप से कलिंग लिपि विकसित हुई। तमिल लिपि के कुछ वर्ण ग्रंथ लिपि के समान ही है, परन्तु कुछ वर्णों की संरचना उत्तर भारतीय लिपियों के समान है।

पश्चिमी भारतीय क्षेत्रों में प्रयुक्त लेखन पद्धति को पश्चिमी लिपि कहा गया है। वस्तुतः पूर्वी एवं पश्चिमी भारतीय लिपियां उत्तर व दक्षिण भारतीय शैली का ही मिश्रित रूप है। इनमें कुछ उत्तर भारतीय शैली का व कुछ दक्षिण भारतीय शैली का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है।

उत्तरी व दक्षिणी शैली का विदेशों में प्रभाव

उत्तर भारत के निकटवर्ती देशों में विभिन्न धर्मों के प्रचार- प्रसार के साथ ही कुछ स्थानीय परिवर्तनों के साथ शारदा लिपि व्यापक प्रचलित हुई। आज भी जापान के विभिन्न धार्मिक अनुष्ठानों में प्रयुक्त सिद्धम् लिपि पर शारदा की गहरी छाप दिखाई देती है। इसी प्रकार बौद्ध धर्म के प्रचार के साथ दक्षिणी-पूर्वी एशियाई देशों की लिपियों पर दक्षिणी शैली का प्रभाव देखा जा सकता है। इनमें सिंघली लिपि, मालदीव की लिपि, मालाबारी लिपि, इंडोनेशिया की लिपि, बर्मी लिपि, स्यामी लिपि आदि है। इन लिपियों पर ग्रंथ लिपि का प्रभाव मुख्य रूप से परिलक्षित होता है।

इस प्रकार भारत की प्राचीनतम ज्ञात ब्राह्मी लिपि ने न केवल भारतवर्ष अपितु पूर्व में जापान तक व दक्षिण में अनेक द्वीप समूहों की लेखन कला के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

उपसंहार

वस्तुतः ब्राह्मी लिपि ने अपनी उन्नत एवं वैज्ञानिक वर्ण संरचना से न केवल भारतीय लिपिशास्त्र को विकसित किया अपितु भारत व निकटवर्ती देशों की लिपियों का मार्गदर्शन भी किया। ब्राह्मी लिपि का ज्ञान होने से अद्यतन प्राप्त शिलालेखों, दानपत्रों, स्तंभलेखों, मुद्राओं आदि के अध्ययन से अनेक ऐतिहासिक, धार्मिक, साहित्यिक, सांस्कृतिक, भौगोलिक तथ्य प्रकाश में आए तथा अनेक भ्रान्तियों का निवारण हुआ। इस प्रकार ब्राह्मी लिपि व उससे विकसित लिपियों ने भारतीय ज्ञान परंपरा को अनेक प्रकार से समृद्ध किया।

संधर्व सूची

1. इदमन्धन्तमः कृत्स्नं जायेत भुवनत्रयम्।
   यदि शब्दाह्वयं ज्योतिरासंसारं न दीप्यते।।
   काव्यादर्श-1.4
2. अष्टाध्यायी, कृते ग्रन्थे 4.3.116
3. अष्टाध्यायी, लिपिसिचिह्नश्च 3.1.53
4. अष्टाध्यायी,
   इन्द्रवरुणभवशर्वरुद्रमृडहिमारण्ययवयवनमातुल चार्याणामानुक् 4.1.49
5. अध्याय 10, ललितविस्तर
6. भारत का इतिहास, रोमिला थापर, पृष्ठ 253
7. अभिलेख प्रवेशिका, रवीन्द्र कुमार वशिष्ठ,पृष्ठ-65
8. अभिलेख प्रवेशिका, रवीन्द्र कुमार वशिष्ठ, पृष्ठ-41